P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6* ISSUE-7* March- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

विज्ञान और धर्म के समन्वय से विकास संभव एक समीक्षात्मक अध्ययन

दिलीप कुमार झा
प्रोफेसर,
शिक्षाशास्त्र विभाग,
प्रज्ञा कॉलेज ऑफ एजुकेशन,
बहादुरगढ़, हरियाणा, भारत

सारांश

धर्म का एक विज्ञान है और उसी प्रकार से विज्ञान का एक धर्म होता है। विज्ञान अपने धर्म को भूलेगा तो मानवता का विकास और उत्थान कम, विनाश ज्यादा होगा। उसी प्रकार से धर्म यदि अपने विज्ञान को भूलेगा तब धर्म कर्मकाण्ड में ही उलझ कर रह जायेगा। वास्तव में विज्ञान और धर्म एक दूसरे के पूरक हैं। दोनों सत्य के खोजी हैं। फर्क इतना है कि विज्ञान का धर्म आधिभौतिक है, और धर्म का सत्य आधिदैविक और आध्यात्म से संबंधित है। विज्ञान के साथ यदि विवेक नहीं होगा तो इससे विकास कम विनाश ज्यादा होगा। विज्ञान गति देता है पर धर्म दिशा देता है। विज्ञान चरण देता है लेकिन धर्म दृष्टि देता है ताकि चरण को दिशा मिले वरना आदमी भटक जायेगा। विज्ञान के द्वारा विकास हो, आवश्यक है लेकिन उसके साथ आध्यात्मदृष्टि भी हो, बहुत आवश्यक है। इसलिए विज्ञान अपने धर्म और धर्म अपने विज्ञान को समझे।

मुख्य शब्द : विज्ञान, धर्म, समन्वय, विकास, सम्पूर्ण मानव समाज।

प्रस्तावना

पिछले पॉच सौ वर्षों से प्रकृति, ब्रह्माण्ड तथा मानव जीवन से सम्बन्धित सभी महत्वपूर्ण क्षेत्रों में विज्ञान की सहायता से अनेक ऐसे क्रान्तिकारी अनुसन्धान हुए हैं। जिन्होने युगों से प्रचलित मान्यताओं, परम्पराओं एवं विश्वासों को मिथ्या और निराधार प्रमाणित कर दिया है। ऐसे में विज्ञान के साथ धर्म के मिश्रण से विकास अवश्य ही बाधित होगा। पन्द्रहवीं शताब्दी तक विज्ञान के उदय से पूर्व यूरोप तथा विश्व, के अन्य सभी देशों में धर्म का अखण्ड साम्राज्य रहा है। इस सम्पूर्ण दीर्घ काल में मानव जीवन का ऐसा कोई क्षेत्र नही था, जिसमें धार्मिक मान्यताओं परम्पराओं तथा विश्वासों का सुदृढ़ शासन न रहा हो। इतना ही नहीं, तत्कालीन धर्मगुरू अपने धर्म ग्रन्थों को सदैव ईश्वर की वाणी घोषित करते रहे, जिससे प्रस्तुत कथनों को संशय और तर्क से पूर्णतः मुक्त रखा जा सके। धर्म के इस रूढ़िवादी दृष्टिकोण ने मानव जाति के दीर्घकालीन इतिहास में ऐसे युग को जन्म दिया है, जिसे अन्धकार युग'कहा जाता है, क्योकि इस युग में मनुष्य को उसकी तर्कबुद्धि के आलोक से वंचित कर दिया गया था। सर्वप्रथम विज्ञान ने अन्धश्रद्धा पर आधारित धर्म के इसी परम्परागत दृष्टिकोण के विरूद्ध गम्भीर चुनौती प्रस्तुत की, जिसने धर्म के मूल आधार को ही अत्यन्त दुर्बल कर दिया। ऐसे में पुनः विज्ञान के साथ धर्म का मिश्रण विकास की ओर नहीं अपितु विनाश की ओर ही ले जाएगा।

जीवन और जगत् के विषय में ईसाई धर्म एवं तत्कालीन मान्यताओं के विरूद्ध बातें करने के कारण ब्रूनो, कॉपरनिकस आदि वैज्ञानिकों एवं दार्शनिकों को अपने प्राणों की बलि देनी पड़ी। स्पिनोजा जैसे गणितज्ञों को भी आजीवन जाति–धर्म बहिष्कार की यातनाएं झेलनी पड़ी। कॉपरिनकस ने ईसाई धर्म में सुस्थापित मान्यताओं, ''पृथ्वी सौरमण्डल का केन्द्र है'', सूर्य पृथ्वी की परिक्रमा करता है, आदि) का खण्डन किया, उसने सूर्य को सौरमण्डल का केन्द्र घोषित किया तथा पृथ्वी को सूर्य की परिक्रमा करते हुए दिखाया। इस सिद्धान्त को स्वीकार करने के लिए यूरोप के एक अन्य महान वैज्ञानिक गैलीलियो को भी कारावास का कठोर दण्ड दिया गया, जिसके कारण उन्हें घोर यातना सहन करनी पड़ी। इस प्रकार विज्ञान तथा धर्म में वह संघर्ष आरम्भ हुआ, जो 19वीं शताब्दी के अन्त तक स्पष्ट रूप में आज भी चल रहा है। इसका ज्वलन्त उदाहरण है, हाल ही में ईसाई धर्म द्वारा कॉपरनिकस को माफ करने की घोषणा है। कॉपरनिकस ने जब केवल एक सत्य को उद्घाटित किया, कोई गलती की ही नही तब धार्मिक संस्थानों का यह रवैया 21वीं शताब्दी में भी धर्म के जड़ता

को ही प्रतिबिम्बित करता है। ऐसे में विज्ञान के साथ धर्म के सम्मिश्रण से विकास का अग्रसारित होना असम्भव है।

गुरूत्वाकर्षण के नियम के आधार पर न्यूटन ग्रहों की जिन अनियमितताओं की व्याख्या नहीं कर सकें, उसके निराकरण के लिए उन्होने समय–समय पर ईश्वर के हस्तक्षेप का सहारा लिया। इसे उनके वैज्ञानिक चिन्तन की सबसे बड़ी दुर्बलता माना जा सकता है। आगे चलकर न्यूटन के इसी गुरूत्वाकर्शण के नियम में संशोधन करके लाप्लास ने ईश्वर के हस्तक्षेप के बिना भी ग्रहों के भ्रमण की व्याख्या की। इस प्रकार न्यूटन ने विश्व रचना तथा ग्रहों के संचालन में ईश्वर की जो भूमिका स्वीकार की थी, उसे लाप्लास ने सदा के लिए समाप्त कर दिया, आधुनिक वैज्ञानिक भी समस्त प्राकृतिक घटनाओं के लिए इसी धर्मनिरपेक्ष दृष्टिकोण का अनुसरण करते है। किसी भी प्राकृतिक प्रक्रिया अथवा घटना के स्वरूप को समझाने के लिए वे प्राकृतिक कारणों की ही खोज करते है। अति प्राकृतिक कारणों की नहीं।

19वीं सदी के वैज्ञानिक चार्ल्स डार्विन ने प्राणियों के जातियों के विकास के सम्बन्ध में विकासवादी सिद्धान्त का प्रतिपादन किया, जो मुख्यतः प्राकृतिक चुनाव तथा योग्यतम् की उत्तरजीविता इन दो अवधारणाओं पर आधारित है। इस सिद्धान्त के अनुसार करोड़ों वर्षों में अपने–अपने प्राकृतिक वातावरण के अन्तर्गत भोजन तथा निवास के लिए एक–दूसरे के विरूद्ध सतत् संघर्ष के परिणामस्वरूप विभिन्न प्रकार के प्राणियों की जातियों का विकास हुआ। डार्विन ने यह प्रमाणित किया कि इस सम्पूर्ण प्रक्रिया में ईश्वर तथा अतिप्राकृतिक शक्तियों की कोई भूमिका नही है, जबकि धर्मपरायण विचारकों के अनुसार ईश्वर ने ही मनुष्य तथा अन्य सभी प्राणियों को उसी रूप में उत्पन्न किया, जिस रूप में आज हैं और इन सब में मनुष्य का सर्वाधिक महत्व है, क्योकि वही ईश्वर के प्रेम एवं अनुग्रह का केन्द्र है, लेकिन डार्विन के विकासवाद के अनुसार अन्य प्राणियों की तुलना में मनुष्य कोई विशेष प्राणी नहीं है। इस प्रकार डार्विन ने रचनावाद, प्रयोजनवाद तथा मनुष्य की सर्वोच्चता का खण्डन करके धार्मिक मान्यताओं, विश्वासों को भारी आघात पहुँचाया। इस प्रकार कॉपरनिकस गैलीलियों, न्यूटन, लाप्लास, डार्विन आदि महान् वैज्ञानिकों द्वारा किए उपर्युक्त क्रान्तिकारी अनुसन्धानों के फलस्वरूप विचारकों तथा साधारण व्यक्तियों के समक्ष विश्व का जो चित्र उपस्थित हुआ, वह विभिन्न धर्म ग्रन्थों में प्रस्तुत किए गए उसके चित्र से पूर्णतः भिन्न था।

वस्तुतः विज्ञान एवं धर्म के उपर्युक्त स्थिति के मूल में जीवन और जगत् के प्रति इन दोनों के परस्पर विरोधी दृष्टिकोण ही है। किसी अलौकिक या दैवी शक्ति का अस्तिस्व, उसमें अखण्ड श्रद्धा एवं आस्था, उसके प्रति पूर्ण समर्पण तथा उसकी पूजा अथवा उपासना धर्म के अनिवार्य तत्व है, जिनके बिना उसका न तो जन्म सम्भव है और न ही विकास, परन्तु विज्ञान धर्म के इस आध्यात्मिक दृष्टिकोण तथा इससे सम्बन्धित मान्यताओं और विश्वासों को स्वीकार नहीं करता। जीवन और जगत् के प्रति विज्ञान का दृष्टिकोण मूलतः भौतिकवादी दृष्टिकोण है, जिसमे अलौकिक या अति–प्राकृतिक सत्ता के लिए कोई स्थान नहीं है। विज्ञान का मूल आधार मनुष्य का अनुभव और तर्कबुद्धि है, जबकि धर्म अनिवार्यतः उसकी आस्था पर आधारित रहता है, जिसका विषय कोई दैवी शक्ति अथवा सत्ता होती है। ऐसे में विज्ञान एवं धर्म के मिश्रण से विकास तो बाधित होगा ही।

वास्तव में विज्ञान का स्वरूप धर्म के स्वरूप से मूलतः भिन्न है। व्यापक अर्थ में विज्ञान किसी भी विषय का क्रमबद्ध एवं व्यवस्थित अध्ययन है, जिसकी प्रमुख विधियॉ है, निरीक्षण तथा प्रयोग। उसके अध्ययन का विषय भौतिक जगत् है, जिसे वह अनुभव पर आधारित निरीक्षण तथा प्रयोग की विधियों द्वारा उसके यथार्थ रूप में जानने का प्रयास करता है। निरीक्षण और प्रयोग के आधार पर विज्ञान जिन प्राक्कल्पनाओं तथा सिद्धान्तों को स्वीकार करता है, उन्हें वह पवित्र, स्थायी तथा निश्चित न मानकर केवल प्रायिक या सम्भाव्य ही मानता है, इस सम्बन्ध में उसका दृष्टिकोण धर्म के दृष्टिकोण के ठीक विपरीत है। धर्म आस्था के आधार पर कुछ ऐसे मूल सिद्धान्तों को अनिवार्यतः स्वीकार करता है, जिन्हे पवित्र माना जाता है और इसी कारण जिनका परित्याग करना अथवा जिनकी सत्यता में संदेह करना भी उसके अनुयायियों के लिए पाप समझा जाता है। वस्तुत पवित्र समझे जाने वाले कुछ आधारभूत सिद्धान्तों में अखण्ड आस्था रखना धर्म के अस्तित्व के लिए अनिवार्य है। परन्तु विज्ञान द्वारा स्वीकृत कोई भी सिद्धान्तों इस अर्थ में पवित्र, स्थायी तथा निश्चित नही होता, उसके सभी सिद्धान्त केवल सम्भाव्य ही होते हैं। विज्ञान के किसी भी सिद्धान्त के विरूद्ध स्पष्ट तथा विश्वसनीय प्रमाण प्राप्त होने पर वह उसमें संशोधन कर सकता है अथवा उसका परित्याग भी कर सकता है। आज तक विज्ञान में जो महान् प्रगति हुई है, उसका एक महत्वपूर्ण कारण विज्ञान का यह तर्कसम्मत दृष्टिकोण भी है, विज्ञान के क्षेत्र में अन्धविश्वास और निर्बौद्धिक आस्था के लिए कोई स्थान नही है। परन्तु धर्म का मूल आधार ही ऐसी आस्था है, जो अनिवार्यतः निर्बौद्धिक होती है और जिसे तर्क अथवा युक्तियों द्वारा प्रमाणित नहीं किया जा सकता। इस प्रकार विज्ञान एवं धर्म में मूल भेद है, जिसके कारण दोनों को एक– दूसरे का सहायक अथवा परस्पर पूरक मानना सम्भव नही होता। इस स्थिति में विज्ञान एवं धर्म के मिश्रण से विकास तो बाधित होना निश्चित है।

स्वयं में विज्ञान न तो धर्म विरोधी है और न उसका समर्थक। उसका उद्देश्य तो प्राकृतिक नियमों के आधार पर जगत् की यथातथ्य व्याख्या करना और उसके सम्बन्ध में सत्य की खोज करना है। वह इस बात की चिन्ता नहीं करता कि उसकी यह व्याख्या धर्म के पक्ष में है अथवा विपक्ष में इस दृष्टि से विज्ञान धर्म के प्रति उदासीन है, परन्तु जैसा कि हम ऊपर देख चुके है, विभिन्न क्षेत्रों में विज्ञान के निष्कर्ष धर्म के मूल विश्वासों तथा सिद्धान्तों का खण्डन करते है। अतः उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि विज्ञान एवं धर्म परस्पर पूरक तथा एक–दूसरे के लिए अनिवार्य नहीं है और वास्तविक अर्थ में इन दोनों के समन्वय की भी कोई सम्भावना नहीं है फिर भी अगर विज्ञान एवं धर्म का

सम्मिश्रण कर ही दिया जाए, तो विकास अवश्य ही बाधित होगा।

किन्तु जब हम इसके द्वितीय पक्ष का अनुशीमन करते है तो पाते हैं कि धर्म एवं विज्ञान के सामंजस्य से इस ब्रह्माण्ड का नैसर्गिक विकास सम्भव है। जैसे एक चिड़िया को खुले आसमान में उड़ने के लिए दोनों तरफ के पंखो की जरूरत होती है। यदि उसका एक पंख काट दिया जाए, तो चिड़िया जमीन पर गिर पड़ेगी। उसी प्रकार विकास रूपी आकाश में उड़ने के लिए धर्म और विज्ञान दोनों का समन्वय जरूरी है।

आज हम 21 वीं सदी मे जी रहे हैं। इस 21वीं सदी का मानव दिखावटी जीवन जीते–जीते इतना दिखावटी हो गया है कि वह वस्तुओं को भी ऊपरी तौर पर यानि दिखावटी रूप को देखता है। वह किसी भी वस्तु या विचारों को गहराई से नहीं लेता है। वह इतना स्वार्थी हो गया है कि प्रत्येक की अपनी स्वार्थ सिद्धि के अनुसार व्याख्या कर लेता है। धर्म गुरूओं, उलेमाओं, पादरियों ने जो धर्म की व्याख्या की है, वही गलत व्याख्या लोगों को भ्रमित कर रही है, जबकि धर्म का सही मतलब उनकी व्याख्या से अलग है।

धर्म का अर्थ

सा धारयति यो धर्मः यह संस्कृत में धर्म की परिभाषा है, जो व्यक्ति धारण करे, वही धर्म है, जबकि धर्म का अर्थ सभी लोग यह समझते हैं कि धर्म पूजा–पाठ, कर्मकाण्डों से जुड़ा हुआ है। धर्म का अर्थ इतना संकुचित कैसे हो सकता है कि वह चन्द शब्दों से बंधा हो, उसका अर्थ बहुत विस्तृत है–

धर्मो विश्वस्य जगतः प्रतिष्ठा।
लेके धर्मिष्ठ प्रजा उपर्सपन्ति।
धर्मेण पापम् अपनुदन्ति।
धर्मे सर्वम् प्रतिष्ठितम्।
तस्साद धर्मम परम वदन्ति।।

कहने का आशय है कि सम्पूर्ण जगत् की प्रतिष्ठा धर्म से है, इस संसार में प्रजा सदैव ही मार्गदर्शन के लिए धर्मनिष्ठ मनुष्य की ओर निहारा करती है। धर्म से ही पाप का क्षय होता है तथा धर्म से ही हर व्यवस्था प्रतिष्ठित होती है। इसलिए धर्म सर्वोपरि है।

धर्म किसी भी विचारधारा का विरोधी नहीं है, सदैव अविरोधी है। जो विरोध करे, वह धर्म नहीं है धर्म शाश्वत है, धर्म के गुणों की व्याख्या मनुस्मृति में इस प्रकार हुई है–

(धृति क्षमादमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रह।
धी विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्म लक्षणम्।।)

मनुस्मृति 6/93।

इस प्रकार धर्म में न किसी प्रकार के कर्मकाण्ड करने व पूजा–पाठ करने का निर्देश दिया गया है। धर्म–कर्म प्रधान है।

विज्ञान का अर्थ

विज्ञान, इसका अर्थ है विभिन्न विषयों का ज्ञान। विज्ञान का अर्थ कभी विनाश नहीं रहा है। विज्ञान ने कभी विनाश नहीं किया, बल्कि सृजन किया है। विज्ञान की श्रेष्ठता तो हमारे उपनिशदों से भी सिद्ध होती है।

विज्ञान यज्ञं तनुते। कर्माणि तनुतेऽपि च।
विज्ञानं देवाः सर्वे। ब्रह्म ज्येष्ठमुपासते। विज्ञानं ब्रह्य चेद्वेद। तस्माच्चेन्न प्रमाद्यति। शरीरे पाप्मनों हित्वा। सर्वान्कामान्समश्नुत इति।

तैत्तिरीय उपनिशद्, ब्रह्मानंद वल्ली 5/1।

विज्ञान ही यज्ञों और कर्मों की वृद्धि करता है। सम्पूर्ण देवगण विज्ञान की श्रेष्ठ ब्रह्मस्वरूप में उपासना करते हैं जो विज्ञान को ब्रह्मस्वरूप में जानते हैं। वे उसी प्रकार के चिन्तन में रत रहते है। वे इसी शरीर से पापों से मुक्त होकर सम्पूर्ण कामनाओं की सिद्धि प्राप्त करते है।

ज्ञान किसी भी क्षेत्र में हो, वह विकास को बाधित नहीं करता है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण मे पूर्वाग्रहों, मूढताओं एवं भ्रामक मान्यताओं का कोई स्थान नहीं है। यहाँ तो तर्कसंगत औचित्यनिष्ठ, उद्देश्यपूर्ण व सत्यान्वेषी जिज्ञासु भाव ही सम्मानित होते हैं। इसमें रूढियॉ नहीं, प्रायोगिक प्रक्रियाओं के परिणाम ही प्रमाणिक माने जाते हैं। सूत्र वाक्य में कहें तो वैज्ञानिक जीवन दृष्टि में परम्पराओं की तुलना में विवेक को महत्व दिया गया है। विज्ञान एक साधन है। जिसे हम किसी भी रूप में प्रयोग कर सकते है। यह तो सृजनकर्ता के रूप में सारे संसार को प्रफुल्लित कर रहा है और परमाणु शक्ति रूप मे विनाशक की तरह मुँह खोले खड़ा है। यह हमारे ऊपर है कि हम इसका प्रयोग सृजनशीलता के लिए करते हैं या विनाश के लिए करते हैं। जैसा कि हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधीजी ने कहा है– साधनों की प्राप्ति के लिए साधनों की पवित्रता नितांत अपेक्षित हैं, विज्ञान विकास को बाधित नहीं करेंगा बल्कि विकास की ओर ले जायेगा।

विज्ञान और धर्म का सम्बन्ध

विज्ञान और धर्म का सम्बन्ध बहुत ही पुराना है। छांदोग्य उपनिशद् में लिखा गया है–

विज्ञानं वाव ध्यानाभ्दयों विज्ञानेन व ऋग्वेंद विजानाति यजुर्वेदॅसामवेदमाथर्वण चर्तुथमितिहासपुराणं पञ्चम वेदानां वेद..... ... चान्नं च रसं चेमं च लोकममु च विज्ञानेनैव विजानाति विज्ञानमुपास्स्वेति।। ।

(हे नारद) ध्यान से अधिक श्रेष्ठ विज्ञान है। विज्ञान द्वारा ही मनुष्य ऋग्वेद को जानता है। यजुर्वेद, सामवेद और चतुर्थ अथर्ववेद, पंचम वेद..... अन्न रस तथा इह लोक परलोक आदि को विज्ञान द्वारा ही जाना जाता है। इसलिए तुम विज्ञान की उपासना करों।

विज्ञान और धर्म का सम्बन्ध हम और अधिक स्पष्टतः समझ सकते हैं। महान् दार्शनिक फ्रांसिस बेकन के शब्दों में– ''धर्म के द्वारा हम अपने आपको जानते हैं। जबकि विज्ञान के द्वारा हम इस संसार को जानते हैं। स्वयं को जाने बिना इस जगत का ज्ञान किस काम का और इस जगत् के ज्ञान के बिना ज्ञान तो निरूपयोगी ही रह जाएगा। ज्ञान तो तभी सम्भव हैं, जब धर्म और विज्ञान एक साथ मिलकर कार्य करें।

विश्व के सभी धर्म विकास की ओर ही ले जाने के साधन हैं। विज्ञान के द्वारा हम जीव–जगत् के नियमों की व्यवहारिकता प्राप्त करते हैं उसके साधक बनते हैं।

जिस तरह आज पूरे विश्व में विज्ञान का दुरुपयोग हो रहा है, उसे देखकर तो यह लग रहा है कि

हम विकास की ओर नहीं विनाश की ओर जा रहे हैं, क्योंकि विश्व के प्रत्येक देश में आज यह जो होड़ लगी हुई है कि दुनिया के सब देशों से अधिक हमारे पास परमाणु शक्ति हों। उसे देख कर लग रहा है कि हम आध्यात्मिकता अर्थात धर्म से दूर होते जा रहे हैं। आज के समय में धर्म और विज्ञान का संबंध बहुत जरूरी है। इसी संदर्भ में भारतीय महान वैज्ञानिक प्रो0 सी0 वी0 रमन जी के शब्द बहुत ही अति अर्थपूर्ण लगते हैं–

''बीसवीं सदी विज्ञान की सदी है। कोई देश उसके चमत्कार से अछूता नहीं है, जो आज है वह कल नहीं रहेगा, परन्तु विज्ञान का प्रयोग मानव हित में हो, यह चुनौती ने केवल समूचे जगत के सामने हैं, बल्कि समूची मानवता के सामने हैं। वैज्ञानिकता विज्ञान और वैज्ञानिकों को हृदय हीन नहीं होना चाहिए। वे हृदयवान हो संवेदनशील हो इसके लिए उन्हें अध्यात्म का साहचर्य चाहिए'' प्रो0 सी0 वी0 रमन जी का प्रत्येक शब्द आज 21वीं सदी के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है। अगर विज्ञान के साथ धार्मिकता अर्थात आध्यात्मिकता नहीं रहेगी तो यह पूरे संसार के लिए विनाशक है। आज के इस वैज्ञानिक युग में धर्म का महत्व उतना ही बना हुआ है, जितना वैदिक काल में था। आज धर्म की आवश्यकता बहुत अधिक है। धर्म के बिना विज्ञान आत्मा विहीन है। जिस प्रकार आत्मा के बिना शरीर का कोई महत्व नहीं होता है, उसी प्रकार विज्ञान धर्म विहीन हो कर किसी मतलब की नहीं रहेगी। क्योंकि जब तक संवेदनशील शब्द विज्ञान से नहीं जुड़ेगा तब तक यह हमारे किसी उपयोग में नहीं आ सकती है। संवेदना विज्ञान से तभी जुड़े कि जब हम धर्म से जुड़ेंगे, अपने पथ को अध्यात्म की ओर ले जाएंगे। विज्ञान ने जड़–जगत के नियम एवं उसके व्यवहारिक उपयोग की खोज की अध्यात्म चेतना की चैतन्यता में क्रियाशीलता एवं उनकी व्यवहारिक उपयोगिता की विधियां खोजी। वैज्ञानिक अध्यात्म जीवन एवं जगत के सभी आयामों के नियमों की खोज एवं उनके सही सदुपयोग का संपूर्ण ज्ञान है।

धर्म और विज्ञान का समन्वय

इस समय विज्ञान और धर्म में समन्वय की बहुत जरूरत है।

अति का भला न बरसना।
अति की भली न धूप।
अति का भला न बोलना।
अति की भली न चुप।।

किसी भी चीज की अति ठीक नहीं होती है। इसलिए बीच का मार्ग अपनाना चाहिए। न विज्ञान ही विनाशक है, न धर्म लेकिन इसके बीच समन्वय बहुत जरूरी है। आज तक हम लोगों ने बहुत से युगों के नाम सुने, जैसे वैदिक युग यानी धर्मयुग जहां धर्म ही धर्म की जगह थी, इसलिए धर्म यानी आध्यात्मिकता की अति हुई। इसलिए हमने विज्ञान युग में प्रवेश किया, लेकिन हमें अब एक ऐसे युग का निर्माण करना होगा, जिसमें न धर्म का बोलबाला हो और न विज्ञान का। हम बीच का रास्ता बनाएं और अपने आने वाली पीढ़ियों को वैज्ञानिक धर्म युग का उपहार दें। इसके लिए हमें विज्ञान और धर्म का मिश्रण करना होगा। विकास धर्म और विज्ञान के मिश्रण से बाधित नहीं होगा, बल्कि इनको अलग–अलग रखने से विकास बाधित होगा, क्योंकि यह एक–दूसरे के पूरक हैं, जैसे–हमारे धर्म में प्रकृति की पूजा करने और बचाव के लिए कहा गया है, तो क्या यह विकास में बाधा पहुंचा सकता है कि हम प्रकृति की रक्षा करें, जबकि विज्ञान भी अब यही कह रहा है कि प्रकृति के साथ खिलवाड़ करने से हम विनाश की ओर जा रहे हैं, इस प्रकार विज्ञान और धर्म दोनों प्रकृति को बचाने के लिए कह रहे हैं। इस प्रकार यह एक–दूसरे के विरोधी नहीं, सहायक हैं। गंगा जी को माता कहा जाता है, माता का अर्थ जीवनदायिनी या जन्म देने वाली होता है। यह हमारे धर्म में बहुत पहले से कहा जाता रहा है, लेकिन अब विज्ञान ने भी सिद्ध कर दिया कि गंगाजल में अधिक ऑक्सीजन है। इस प्रकार यह एक–दूसरे के सहयोगी हैं, लेकिन दुनिया में इस समय विज्ञान की वजह से जो अस्थिरता आई है, उसे हमें दूर करने के लिए विज्ञान और धर्म का मिश्रण करना होगा। आज हम जिस विकास की दौड़ में शामिल है, उसे सही अर्थों में जीतने के लिए रथ के दोनों पहियों का (धर्म–विज्ञान) समन्वय जरूरी है। तभी यह सही अर्थों में विकास की जीत होगी। चाचा कलाम के शब्दों में विज्ञान की कोशिश है कि लोगों का भौतिक जीवन बेहतर हो, जबकि धर्म का प्रयास है कि प्रार्थना आदि उपायों से इंसान सच्ची राह चले, विज्ञान और धर्म के मिलन से तेजस्वी नागरिक का निर्माण होता है। धार्मिक व्यक्ति का लक्ष्य आध्यात्मिक अनुभूति प्राप्त करना है, जबकि वैज्ञानिक का लक्ष्य कोई खोज या आविष्कार करना होता है। यदि जीवन के दो पहलू आपस में मिल जाएं, तो हम उस शिखर पर पहुँच जाएंगे, जहां उद्देश्य और कर्म एक हो जाते हैं,,

ब्रूनो के शब्दों में–मैं सच्चा धार्मिक हूं, इसलिए मैं सच्चा वैज्ञानिक हूं। धर्म हो या विज्ञान दोनों सत्य के अनुसन्धान पर जोर देते हैं। इनमें कहीं कोई विरोध नहीं है।,, मुत्युदण्ड मिलने से पहले उन्होने कहा था–वैज्ञानिक आध्यात्म ही है, जो मृत्यु के पहले भी सत्यान्वेषी बनाए रखती है। हमें भविष्य की सुरक्षा की दृष्टि से विज्ञान और धर्म को मिश्रित करके देखना चाहिए और नए वैज्ञानिक धर्म युग के निर्माण के प्रति संकल्प लेना चाहिए।

सुरक्षित भविष्य और विकसित विश्व के लिए धर्म, ज्ञान और वैज्ञानिक कर्म के समन्वय की बहुत ही आवश्यकता हैं।

अध्ययन का उद्देश्य

धर्म और विज्ञान को भ्रांतिवश गलत प्रकार से परिभाषित किया जाता रहा है, जबकि ये दोनों एक ही हैं और दोनों का पारस्परिक संबंध है। विज्ञान को तो उसके वास्तविक रूप में समझ लिया जाता है, किंतु धर्म को उससे संबंधित व्यक्ति अपने दृष्टिकोण के अनुकूल ग्रहण करते हैं, जिसका परोक्ष प्रभाव विज्ञान के अर्थ पर भी होता है। धर्म और विज्ञान के इस द्वैत भाव के कारण उत्पन्न समस्याओं पर गहन चिंतन और विचार विमर्श किया जाना आवश्यक है। विज्ञान और धर्म–एक दूसरे के विरोधी न होकर पूरक हैं और सभी धर्मों का आधार अनुभवजन्य सौंदर्य है। अनुभूत सच्चाई ही धार्मिक विश्वास का आधार बनती है। इसी प्रकार विज्ञान भी विभिन्न गणितीय उपयोग

व तार्किक सत्यों पर आधारित है। वैज्ञानिक मान्यताएं सदैव नई खोजों की प्राप्ति में लगी रहती हैं और ये नई खोजें पुरानी खोजों का स्थान लेती रहती हैं। धर्म का आधार यदि विज्ञान सम्मत नहीं है, तो वह अधिक समय तक प्रभावी नहीं रह सकेगा। मानव जीवन का आधार सूर्य, चंद्रमा और तारागण के अस्तित्व, पृथ्वी द्वारा सूर्य की प्रदक्षिणा और ऐसी ही अनेक घटनाएं वैज्ञानिक विश्लेषणों पर आधारित हैं, किंतु इन सब का नियंता कोई भी नहीं है, यही धर्म द्वारा परिपुष्ट किया जाता है।

धर्म और विज्ञान हमें दूसरों के प्रति सहिष्णु बनाना सिखाते हैं और इसीलिए धर्म में घृणा और हिंसा का कोई स्थान नहीं है। वैज्ञानिक अपने आविष्कारों का उपयोग मानव मात्र की भलाई करने के लिए प्रयासरत रहते हैं और यही उनका मूल उद्देश्य भी है। धर्म का उद्देश्य भी मानव जीवन को और अधिक उपयोगी बनाने और मानव जाति की सेवा करना है। इस प्रकार दोनों में कोई अंतर नहीं है। महानतम वैज्ञानिक अल्बर्ट आइंस्टीन ने कहा था कि धर्म को विज्ञान का और विज्ञान को धर्म का पूरक बनना चाहिए। विज्ञान भौतिक पदार्थो का अध्ययन करता तो वहीं विज्ञान चेतना का अध्ययन करता है। धर्म और विज्ञान में परस्पर समन्वय से ही जीव मात्र का कल्याण संभव है। संसार की जिन सभ्यताओं ने इस सिद्धांत को अपनाया है, वे ही आज जीवित हैं और जिन्होंने इसके विपरीत आचरण किया है, वे इतिहास में सिमटकर रह गई हैं।

निष्कर्ष

इस प्रकार विज्ञान के बगैर धर्म और धर्म के बगैर विज्ञान अधूरा है। धर्म और विज्ञान एक दूसरे से जुड़ने के बाद ही पूर्णता प्राप्त कर सकते है। दोनों को एक दूसरे का पूरक कहा जा सकता है, और दोनों ही मानव के विकास के लिए जरूरी है। धर्म मनुष्य को भीतर से सुन्दर बनाता है और विज्ञान बाहर से। इस प्रकार दोनों का विवेकपूर्ण तालमेल मानव जाति को हर प्रकार से सुन्दर बना सकता है और मानवता का कल्याण कर सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

अग्नि पुरान – चौखम्बा संस्कृत सीरीज आफिस, वाराणसी–1, 1966।

अग्रवाल, आर.सी. (2004) भारतीय संविधान का विकास तथा राष्ट्रीय आंदोलन, नई दिल्ली, एस. चन्द एण्ड कम्पनी लिमिटेड।

अग्रवाल, कमलेश (2001) कौटिल्य अर्थशास्त्र एवं शुक्रनीति की राज्यव्यवस्थाएं, नई दिल्ली, राधा पब्लिकेशन्स, दरियागंज।

अथर्ववेद – स्वाध्याय मण्डल, किल्ला पारडी (वलसाड), गुजरात, 1950।

अयंगर, के.वी. (1935) सम आस्पेक्ट्स ऑफ एनशिअन्ट इण्डियन पॉलिटी, मद्रास।

अलतेकर, अन्नत सदाशिव (2001), प्राचीन भारतीय शासन पद्धति, वाराणसी, विश्वविद्यालय प्रकाशन।

अलतेकर, अन्नत सदाशिव (1959), प्राचीन भारतीय शासन पद्धति, इलाहाबाद, भारतीय भण्डार लीडर प्रेस।

अल्तेकर, ए.एस. (1958), स्टेट एण्ड गवर्नमेन्ट इन एनशिअन्ट इण्डिया, नई दिल्ली, मोतीलाल बनारसीदास।

अवस्थी डॉ0 ए. एवं अवस्थी आर.के., (1993), भारतीय राजनीतिक चिंतन, जयपुर, रिसर्च पब्लिकेशन्स।

अवस्थी, अमरेश्वर, अवस्थी, आनंदप्रकाश (2001), भारतीय प्रशासन, आगरा, लक्ष्मीनारायण अग्रवाल।

अवस्थी, आन्नद प्रकाश (2003–04), भारतीय राजनीतिक विचारक, आगरा, लक्ष्मी नारायण अग्रवाल।

आचार्य दीपंकर (1989), कौटिल्यकालीन भारत, लखनऊ, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान

आप्टे, वामन शिवराम, (1969), संस्कृत हिंदी कोश, दिल्ली, मोतीलाल बनारसीदास।

इन्द्र, एम.ए. (1990), कौटिल्य अर्थशास्त्र, नई दिल्ली, राजपाल एण्ड सन्स।

ऋग्वेद – स्वाध्याय मण्डल, किल्ला पारडी, वलसाड, गुजरात।

एन.सी. बन्धोपाध्याय (1926), कौटिल्य, कलकत्ता।

एपादोराय, ए. (1992) इण्डियन पॉलिटिकल थिंकर्स, नई दिल्ली, खामा पब्लिशर्स।

एबन्सटिन, विलियम, (1977) ग्रेट पॉलिटिकल थिंकर्स, नई दिल्ली, ऑक्सफोर्ड एण्ड आई.बी. एच. पब्लिशिंग कम्पनी।

ओझा प्रियदर्शी, (2010), पश्चिमी भारत में जल प्रबंधन, दिल्ली, सुभद्रा पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।

ओझा, गौरीशंकर हीराचन्द (2004), उदयपुर राज्य का इतिहास, भाग–1, जोधपुर, राजस्थान ग्रन्थागार।

कांगले, आर.पी. (1988), दि कौटिल्य अर्थशास्त्र (तृतीय खण्ड), नई दिल्ली, मोतीलाल बनारसीदास।

काणे पी.वी. (अनुवाद–अर्जुन नौबे कश्यप), (1980) धर्मशास्त्र का इतिहास, लखनऊ, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान।

काणे, पी.वी. (1990), धर्मशास्त्र का इतिहास, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, हिन्दी संस्थान।

काणे, पी.वी. (1988), हिस्ट्री ऑफ धर्मशास्त्र, पूना, भण्डारकर ऑरियेन्टस रिसर्च इन्सटीट्यूट।

कानोव, स्टेन (1975), कौटिल्य स्टडीज, दिल्ली, ऑरियन्टस पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स।

कुमार अशोक, राजनीति विज्ञान, आगरा, उपकार प्रकाशन।